4

निपट अयाना.....

निपट अयाना, तैं आपा नहीं जाना,
नाहक भरम भुलाना बे ।। टेक ।।
पीय अनादि मोहमद मोह्यो, परपदमें निज माना बै ।।1।।
चेतन चि भिन्न जड़तासों ज्ञानदरशरस–साना बे।
तनमें छिप्यो लिप्यो न तदपि ज्यों, जलमें कजदल माना बे ।।2।।
सकलभाव निज निज परनतिमय, कोई न होय बिराना वै ।
तू दुखिया परकृत्य मानि ज्यों, नभताड़न––श्रम ठाना बै ।। 3 ।।
अजगनमें हरि भूल अपनपो भयो दीन हैराना बै ।
दोल, सुगुरुधुनि सुनि निजमें निज, पाय लह्यो सुखथाना बे ।।4।।

हे निपट अज्ञानी जीव! तूने अपने स्वरूप को नहीं जाना और व्यर्थ में ही भ्रम के कारण तू अपने आपको भुला रहा है अनादिकाल से मोहरूपी शराब को पीकर तू मोह के नशे मे बहक रहा है और पर में अर्थात् पुद्गल देह में ही अपनापन मान रहा है।।१।।

तू दर्शन और ज्ञान स्वभाव वाला चेतन है, उसी से युक्त है जड़ता से – पुद्गल से पूर्णत: भिन्न है। तू देह में रहते हुये भी देहस्वरूप नहीं है। जिस प्रकार कमल का पत्ता जल में रहता है, वैसे ही तू भी देह में लिप्त नहीं है, देह से भिन्न ही है।।२।।

सारे भावों की परिणति अपनी–अपनी ही है, कोई भी भाव अन्य द्रव्य का कभी नहीं होता किन्तु तू परद्रव्य की क्रिया को अपना समझकर आकाश को पीटने के समान व्यर्थ ही श्रम कर रहा है।।३।।

तू बकरियों के झुण्ड में रहते हुए सिंह के समान अपने आपको, अपने स्वभाव को भूलकर दीन होकर हैरान हो रहा है। अत: कविवर दौलतरामजी कहते हैं कि जिसने सत्गुरू की वाणी को सुनकर निज स्वरूप में ही निज को पा लिया, उन्हें वास्तविक सुख के स्थान की प्राप्ति होती है।।४।।